नईदुनिया

संपादकीय

सीवर में होती दर्दनाक मौतें

यह बेहद कष्टकारी व अमानवीय है कि 21वीं सदी में भी कुछ लोग हाथ से मैला साफ करने के व्यवसाय में लगे हैं। जहां सीवर में उतरते ही मौत उनका इंतजार कर रही होती है। लेकिन कोर्ट और सरकारों की सख्ती जमीन पर नजर नहीं आती। सरकार व स्थानीय निकाय यूं तो सीवर साफ करने के लिये कर्मचारी नहीं रखते, लेकिन ठेकेदारों के जरिये ये काम बदस्तूर जारी है। फलत: सीवर में उतरने से मरने वालों को न तो मुआवजा मिल पाता है और न ही किसी की जवाबदेही तय हो पाती है। यह दुखद ही कि छह मई को बठिंडा में एक ट्रीटमेंट प्लांट की सफाई लिए उतरे तीन लोग फिर जिंदा नहीं लौट पाए। एक सप्ताह बाद, रोहतक के माजरा गांव में एक व्यक्ति और उसके दो बेटे एक -दूसरे को जहरीले मैनहोल से बचाने की कोशिश में एक के बाद एक मर गए। पंद्रह मई को फरीदाबाद में एक मकान मालिक ने नियुक्त सफाईकर्मी को बचाने के लिए सैप्टिक टैंक में छलांग लगा दी। दोनों की ही जहरीली गैस से दम घुटने से मौत हो गई। निश्चित रूप से ये अलग-अलग दुर्घटनाएं नहीं हैं बल्कि ये व्यवस्था की विद्रूपता के चलते हुई हत्याएं हैं। जिसके कारक तंत्र की उदासीनता, अवैधता और जातीय विवशता में निहित हैं। विडंबना ही है कि रोजगार के रूप में हाथ से सफाई के रोजगार पर प्रतिबंध, सफाईकर्मियों के पुनर्वास अधिनियम 2013 तथा खतरनाक सफाई पर प्रतिबंध लगाने के सुप्रीम कोर्ट के आदेशों के बावजूद मौतों का सिलसिला थमा नहीं है। ऐसे मामलों में सुरक्षा प्रोटोकॉल की अनदेखी की जाती है। सुरक्षा उपकरण नदारद रहते हैं। अकसर इसकी जवाबदेही से बचा जाता है। बठिंडा में लोगों के विरोध के बाद एक निजी ठेकेदार के खिलाफ देर से प्राथमिकी दर्ज जरूर की गई, लेकिन फरीदाबाद और रोहतक में मामला दर्ज होने की कोई खबर नहीं है।

दरअसल, अक्सर सरकारी तंत्र ठेकेदारों को दोषी ठहराकर जिम्मेदारी से पल्ला झाड़ लेता है। आखिर इन ठेकेदारों को काम पर कौन रखता है। निस्संदेह, सरकारी तंत्र भी इस आपराधिक लापरवाही के लिए जिम्मेदार है। आखिर सफाईकर्मियों से जुड़े सुरक्षा मानकों की निगरानी की जवाबदेही तय क्यों नहीं होती? नगर पालिकाएं और राज्य एजेंसियां आउटसोर्सिंग की दुहाई देकर अपने कानूनी और नैतिक कर्तव्यों से बच नहीं सकती। दुर्भाग्य से इन हादसों का स्याह पक्ष जातीय विद्रूपता भी है। अधिकांश सफाई कर्मचारी समाज में हाशिये पर पड़े समुदायों से आते हैं। सफाई जैसा महत्वपूर्ण काम करने के बावजूद उन्हें हेय दृष्टि से देखा जाता है। सीवर सफाई के लिये मशीनें खरीदने के दावों के बावजूद हाथ से सफाई का क्रम नहीं टूटता। कई जगह मशीनों के खरीदने पर करोड़ों का परिव्यय दिखाया गया, लेकिन जमीनी हकीकत नहीं बदली। मशीनें तो धूल फांक रही हैं और इंसानों को नरक में धकेला जा रहा है। निर्विवाद रूप से हमारे समाज पर मैनुअल स्कैवेंजिंग एक काला धब्बा है। न्यायपालिका सख्ती से इसे रोकने को कहती है, सत्ताधीश आदेश की औपचारिकता पूरी करते हैं, लेकिन फिर भी सीवर की जहरीली गैस में लोगों के मरने का सिलसिला थमा नहीं है। किसी सफाईकर्मी के मरने पर कुछ समय तो हो-हल्ला होता है, मगर फिर मामला ठंडे बस्ते में चला जाता है। वक्त की दरकार है कि नगर निकायों को इन हादसों के लिये सीधे जवाबदेह बनाया जाए। सीवर की सफाई से जुड़ी मौत के लिये स्वत: कानूनी कार्रवाई, तत्काल मुआवजा और विभागीय कार्रवाई की जाए। मानवीय श्रम की जगह तकनीक के उपयोग से बहुमूल्य जीवन को बचाया जाना चाहिए। ये काम सिर्फ कागजों तक सीमित न रहे। बदलाव व्यवहार में भी नजर आए। हमारे कानून को ठीक से लागू न कर पाने से किसी की दर्दनाक मौत नहीं होनी चाहिए। सीवर कर्मियों की मौत पर रोते-बिलखते और असहाय परिवारों का अंतहीन दर्द अब खत्म होना ही चाहिए। दुर्भाग्य से परिवार के कमाने वाले व्यक्ति के मर जाने के बाद उसके परिवार व बच्चों की परवरिश की कोई व्यवस्था नहीं होती। उन्हें मुआवजा देने से भी ठेकेदार बच जाते हैं। ऐसे परिवारों के पुनर्वास को भी गंभीरता से लिया जाना चाहिए।

आतंकी फन को कुचलने का सही वक्त

योगेश कुमार गोयल

(राष्ट्रीय आतंकवाद विरोधी दिवस/21 मई/ विशेष)

पिछले महीने जम्मू-कश्मीर के पहलगाम में पाकिस्तान पोषित दुर्दांत और कुख्यात आतंकवादियों ने निर्दोष पर्यटकों का लहू बहाकर फिर भारत के धर्य के बांध को तोड़ दिया। प्रतिक्रिया तो होनी थी। शांति समर्थक राष्ट्र को ऑपरेशन सिंदूर के माध्यम से संदेश देना पड़ा कि जो बेवजह टकराएगा उसे मिट्टी में मिला दिया जाएगा। मगर आतंकवाद के सारे फनों को कुचलने की जरूरत है।

जम्मू-कश्मीर दशकों से आतंक के साये में है। कुछ दशकों में आतंकियों ने देश के अन्य हिस्सों में भी कभी किसी भरे बाजार तो कभी किसी बस या ट्रेन में निर्दोषों के लहू से होली खेली है। आतंकवाद ने न केवल हजारों लोगों की जान ली बल्कि अनगिनत परिवारों को तबाह किया है। बच्चे अनाथ हुए, माताएं-बेटियां विधवा हुईं और बुजुर्गों की जीवन-संध्या से सहारा छिन गया। इन विभीषिकाओं के खिलाफ देश ने जो संघर्ष किया, उसी के सम्मान में हर साल 21 मई को राष्ट्रीय आतंकवाद विरोधी दिवस मनाया जाता है। यह दिन आतंकवाद के विरुद्ध संघर्ष में शहीद हुए जवानों और नागरिकों को श्रद्धांजलि देने का अवसर है। इस दिन देशभर में लोगों को यह शपथ दिलाई जाती है कि वे हर प्रकार की हिंसा और आतंकवाद का विरोध करेंगे, शांति, अहिंसा और सहिष्णुता के सिद्धांतों में विश्वास रखेंगे और देश की एकता, अखंडता व सामाजिक सद्भाव की रक्षा करेंगे। यह भी याद रखना चाहिए कि 21 मई 1991 को देश के पूर्व प्रधानमंत्री राजीव गांधी की तमिलनाडु के श्रीपेरंबदूर में एक महिला आत्मघाती हमलावर ने हत्या कर दी थी। इस घटना ने भारतीय लोकतंत्र की जड़ों को हिला कर रख दिया था। उसी दिन की स्मृति में राष्ट्रीय आतंकवाद विरोधी दिवस की शुरुआत हुई।

हाल के वर्षों में भारत ने आतंकवाद के विरुद्ध जो नीति अपनाई है, वह पहले से कहीं अधिक कठोर, रणनीतिक और सशक्त हो चुकी है। विशेषकर जम्मू-कश्मीर में सुरक्षा बलों ने जिस बहादुरी से अभियान चलाए हैं, उन्होंने आतंकी नेटवर्क को बड़ा झटका दिया है। अनुच्छेद 370 हटाए जाने के बाद घाटी के हालात धीरे-धीरे पटरी पर आए हैं। सैकड़ों आतंकी मुठभेड़ों में मारे गए हैं और सुरक्षाबलों ने सीमाओं पर घुसपैठ की अनेक कोशिश विफल की हैं।

हालांकि पूरी तरह से आतंक का खात्मा अब भी शेष है। इसकी ताजा मिसाल 22 अप्रैल को अनंतनाग जिले के पहलगाम में हुए आतंकी हमले में देखी जा सकती है। बैसरन घाटी में हुए इस हमले ने एक बार फिर स्पष्ट कर दिया कि आतंकवाद की जड़ें अभी भी पाकिस्तान में मौजूद हैं और वहां से संचालित आतंकी संगठन भारत की शांति व्यवस्था को चुनौती देने में कोई कसर नहीं छोड़ रहे हैं। इस हमले में 26 निर्दोष पर्यटकों की जान चली गई थी। यह हमला ऐसे समय में हुआ, जब घाटी में आतंकी घटनाओं में गिरावट दर्ज की जा रही थी, जो भारत की कूटनीतिक और सुरक्षा नीति की सफलता का संकेत थी। इस नृशंस नरसंहार के बाद भारत ने ऑपरेशन सिंदूर (सैन्य अभियान) चलाकर पाकिस्तान के कब्जे वाले कश्मीर में स्थित आतंकी ठिकानों पर एयर स्ट्राइक की। इसमें लगभग 100 से अधिक आतंकियों को मार गिराया गया और उनके अनेक अड्डों को नष्ट किया गया। पहलगाम हमले के बाद भारत ने पाकिस्तान पर चौतरफा दबाव बनाया। साथ ही सिंधु जल संधि को स्थगित करने का निर्णायक फैसला लिया । अब यह विचार प्रबल हो गया है कि जब पाकिस्तान बार-बार आतंकियों को शरण देता है और भारत की नागरिक आबादी को निशाना बनाता है तो ऐसे में इस ऐतिहासिक संधि को बनाए रखने का कोई औचित्य नहीं रह जाता।

भारत के सैन्य अभियानों ने न केवल प्रत्यक्ष रूप से आतंकियों को नुकसान पहुंचाया है बल्कि अंतरराष्ट्रीय मंचों पर भी पाकिस्तान को अलग-थलग करने में सफलता प्राप्त की है। फाइनेंशियल एक्शन टास्क फोर्स (एफएटीएफ) ने उसे ग्रे लिस्ट में डालकर उसकी अर्थव्यवस्था पर जबरदस्त दबाव बनाया है। संयुक्त राष्ट्र और अन्य वैश्विक संस्थानों के सामने भारत ने बार-बार पाकिस्तान के दोहरे रवैये को उजागर किया है। घाटी में हो रहे सकारात्मक बदलावों की जड़ में सुरक्षा बलों की बहादुरी के साथ-साथ स्थानीय जनता की बदली मानसिकता भी है। सरकारी आंकड़ों के अनुसार, अब घाटी में स्थानीय युवाओं की आतंकी संगठनों में भर्ती में काफी गिरावट आई है। पहले जहां एक साल में दर्जनों युवाओं के लापता होने की खबरें आती थी, अब वह संख्या इक्का-दुक्का रह गई है। भारत की वर्तमान नीति 'आतंक के प्रति शून्य सहनशीलता' की है और इस नीति के हर पहलू में क्रियान्वयन दिख भी रहा है। अब आतंकी हमलों का जवाब केवल बयानबाजी तक सीमित नहीं रहता बल्कि पाकिस्तान की सीमा में घुसकर उनके ठिकानों को नेस्तनाबूद किया जाता है। यह बदलाव केवल सैन्य शक्ति के उपयोग का नहीं बल्कि जन-मन के दृढ़ संकल्प का परिचायक है।

बेशक आतंकवाद की कमर तोड़ी जा रही है लेकिन अब भी इसकी अंतिम परछाई को मिटाना बाकी है। जब तक देश का कोई भी कोना आतंक से मुक्त नहीं होता, तब तक यह संघर्ष जारी रहना चाहिए। आतंकवाद के विरुद्ध लड़ाई केवल हथियारों से नहीं, बल्कि समाज की एकजुटता, सूझबूझ और जागरुकता से ही जीती जा सकती है। हर नागरिक को यह समझना होगा कि आतंकवाद केवल सीमाओं की समस्या नहीं बल्कि मानवता का साझा दुश्मन है। हम राष्ट्रीय आतंकवाद विरोधी दिवस के मौके पर न केवल शपथ लें बल्कि उसे व्यवहार में भी उतारें। हर व्यक्ति आतंकवाद के खिलाफ इस लड़ाई में सैनिक बने, चाहे वह सूचनाएं देकर सुरक्षा एजेंसियों की मदद करने की बात हो या बच्चों को कट्टरपंथ से दूर रखने की दिशा में पहल करने की। तभी हम एक ऐसे भारत की कल्पना कर सकेंगे, जहां शांति, सद्भाव, एकता और विकास के मूल्यों की बुनियाद पर भविष्य की इमारत खड़ी होगी।

ग्रीन एनर्जी का अमरावती मॉडल देगा दुनिया को नई दिशा

डॉ. राजेन्द्र प्रसाद शर्मा

ग्रीन एनर्जी को बढ़ावा देने के लिए जहां दुनिया के देशों में टुकड़ों-टुकड़ों में काम हो रहा है, वहीं आंध्र प्रदेश की नई राजधानी अमरावती को पूरी तरह से ग्रीन एनर्जी से संचालित शहर बनाने की दिशा में मुख्यमंत्री चन्द्रबाबू नायडू ने काम भी शुरू कर दिया है। अमरावती को पूरी तरह से ग्रीन एनर्जी से संचालित शहर बनाने में करीब करीब 65 हजार करोड़ रुपये की लागत आएगी और सोलर, पवन और जल विद्युत पर आधारित इस परियोजना में अमरावती में उपयोग आने वाली सारी बिजली रिन्यूवल एनर्जी स्रोत से ही प्राप्त होगी। सर्वाधिक कार्बन उत्सर्जन करने वाली जीवाश्म ऊर्जा का अमरावती में नामोनिशान नहीं होगा। अपने आप में यह दुनिया के लिए ग्रीन एनर्जी के सपने को अमली जामा पहनाने की बड़ी, महत्वाकांक्षी और दुनिया के देशों के लिए प्रेरणीय पहल मानी जानी चाहिए।

कोई इसे इतिहास रचने की बात करता है तो कोई ग्रीन एनर्जी के क्षेत्र में बड़ी और रचनात्मक पहल के रूप में देख रहा है। कहा जाए तो दुनिया के देश जिस तरह से ग्रीन एनर्जी के लक्ष्य को लेकर आगे बढ़ रहे हैं और जिस तरह से बड़े बड़े शिखर सम्मेलनों के साझा घोषणा पत्रों में घोषणाएं हो रही हैं उससे अलग हटकर आंध्र प्रदेश के मुख्यमंत्री नायडू की इस पहल को माना जाना चाहिए। प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी स्वयं इस परियोजना पर नजर रख रहे हैं। कृष्णा नदी के तट पर आंध्र प्रदेश की नई राजधानी में ग्रीन एनर्जी का यह प्रोजेक्ट 217 वर्गमीटर को समेटे है।

अमरावती को पूरी तरह ग्रीन एनर्जी युक्त दुनिया का पहला शहर बनाने के लिए 2050 तक की मांग का आकलन कर लिया गया है करीब 2700 मेगावाट विद्युत की आवश्यकता होगी। इसमें से 30 प्रतिशत सोलर और पवन आधारित उर्जा होगी तो 70 प्रतिशत बिजली का उत्पादन पनबिजली आधारित होगी। ग्रीन एनर्जी के चार प्रमुख स्रोत हैं। इसमें सूर्य की गर्मी आधारित सोलर ऊर्जा, हवा के झोकों पर आधारित पवन ऊर्जा, जल आधारित पन बिजली परियोजना और भूगर्भ के ताप आधारित भूतापीय ऊर्जा को रिन्यूवल एनर्जी के नाम से जाना जाता है।

इसमें प्रमुखता से सोलर, पवन और पन बिजली को लिया जाता है। दरअसल जीवाश्म आधारित उर्जा जिसमें प्रमुखत: कोयला व लिग्नाइट का प्रयोग होता है। उसके चलते जलवायु में तेजी से परिवर्तन हुआ है और आज दुनिया के देश तापमान वृद्धि को 1.5 प्रतिशत तक रखने के लिए जूझ रहे हैं। दो प्रतिशत वृद्धि दर को डेढ़ प्रतिशत लाना टेढ़ी खीर बना हुआ है। पेरिस घोषणा के अनुसार दुनिया के देशों को इसकी जिम्मेदारी सौंपी गई है। जलवायु परिवर्तन परिणाम आए दिन दिखते हैं,जिसमें तापमान में बढ़ोतरी, ग्लेशियरों का सिकुड़ना, अनपेक्षित मौसम चक्र, कभी तेज गर्मी तो कभी तेज सर्दी और कभी तेज बरसात । आंधी-तूफान, दावानल और चक्रवातों के नए नए रूप और बार-बार आवृति हमारे सामने हैं। समुद्र का जल स्तर बढ़ने से समुद्र किनारे के शहरों के सामने अस्तित्व का संकट आ गया है तो जंगलों के दावानलों का असर आसपास के शहरों खासतौर से अमेरिकी शहरों में देखा जा चुका है। सूखा और बाढ़ की समस्या बढ़ी है। दवाओं के बेअसर होने और संक्रामक रोगों की बढ़ोतरी सामने हैं।

हालांकि इसमें सरकारों की इच्छा शक्ति, संसाधन, आर्थिक सामाजिक हालात के साथ ही विकसित देशों द्वारा खुले दिल से सहयोग नहीं करना बड़ा कारण बनता जा रहा है। ऐसा नहीं है कि जलवायु परिवर्तन के संकट से दुनिया के देश सचेत नहीं हैं। बल्कि इस दिशा में किए जा रहे प्रयासों को लेकर रैंकिंग भी होन लगी है। जलवायु परिवर्तन प्रदर्शन रेकिंग में भारत 10वें स्थान पर है। रैंकिंग में डेनमार्क शीर्ष पर है। भारत में रिन्यूवल एनर्जी की दिशा में ठोस प्रयास हो रहे हैं। गुजरात के कांडला सेज को पूरी तरह से हरित औद्योगिक क्षेत्र बनाया गया है तो तमिलनाडु के महाबलीपुरम के शोर मंदिर को ग्रीन एनर्जी पुरातात्विक स्थल के रूप में पहचान मिल चुकी है। डेनमार्क का कोपेनहेगेन भी इसी श्रेणी में आता है। आस्ट्रेलिया का एडिलेड, कोरिया का सियोल, आइवरकोस्ट का कोकोडी, स्वीडन का मालमो और दक्षिणी अफ्रिका का केपटाउन ग्रीन एनर्जी की दिशा में बढ़ते हुए शहरों में से हैं। गुजरात के कांडला सेज में 1000 एकड़ में साढ़े तीन लाख पौधे रोपित किए गए हैं। समुद्र के नमक के पानी से प्रभावित क्षेत्र को जलवायु की दृष्टि से करीब करीब बदल ही दिया गया है। अमरावती को पूरी तरह से ग्रीन सिटी बनाने की दिशा में जो कार्य आरंभ हो रहा है वह समूची दुनिया के लिए एक मिसाल है। वहां पर सरकारी भवनों के साथ ही अन्य स्थानों पर सोलर पेनल और पवन उर्जा के स्रोत लगाए जाएंगे।

भारत में केन्द्र व राज्य सरकारें अक्षय ऊर्जा के इस क्षेत्र में लगातार आगे बढ़ रही हैं। राजस्थान रिन्यूवल एनर्जी उत्पादन के क्षेत्र में समूचे देश में आगे है और भड़ला पार्क जैसे सोलर पार्क यहां विकसित हो चुके हैं। सरकार अब घरों की छतों पर सोलर एनर्जी के उत्पादन को बढ़ावा दे रही है तो खेती में सोलर पंपों और अन्य कार्यों में उपयोग सकारात्मक प्रयास माने जा सकते हैं। पर अमरावती इन सबसे अलग इसलिए हो जाती है कि यहां समग्रता से प्रयास करते हुए समूचे शहर को ग्रीन एनर्जी युक्त बनाया जा रहा है।

आजकल

आम आदमी पार्टी की दीवार दरकी ...

दिल्ली नगर निगम में आम आदमी पार्टी के पंद्रह पार्षदों का इस्तीफा और नई पार्टी के गठन की घोषणा के बाद दिल्ली के राजनीतिक समीकरण बदलते नजर आ रहे हैं। फिलहाल दिल्ली के राजनीतिक परिदृश्य में आम आदमी पार्टी बहुस्तरीय मुश्किलों से घिरी दिखती है। इसके कुछ शीर्ष नेताओं पर मुकदमों और विधानसभा चुनावों में पराजय के बाद उसके लिए अपने कई नेताओं को संभालना चुनौती-सा बन गया है। ऐसे में पंद्रह पार्षदों का इस्तीफा और नई पार्टी बनाने का असर आप की राजनीति पर पड़ना तय माना जा रहा है।

आप से इस्तीफा देने वाले पार्षदों ने दिल्ली की जनता के लिए काम करने में बाधा को अपने फैसले का कारण बताया है। देश के लोकतांत्रिक ढांचे में किसी पार्टी के भीतर कार्य और नीतियों को लेकर मतभेद पैदा होना और किसी नेता का नया पक्ष चुनना एक सामान्य बात है, लेकिन यह भी सच है कि मुश्किल दौर से गुजर रही अपनी पार्टी का दामन छोड़ कर सुविधा का ठौर चुनना एक चलन बन गया है।

आम आदमी पार्टी का उदय इस दावे के साथ हुआ था कि वह देश की राजनीतिक संस्कृति में बदलाव का वाहक बनेगी। शुरुआती कुछ समय तक ऐसा लगा भी, जब दिल्ली के लोगों ने यह महसूस किया कि इस पार्टी की सरकार की कामकाज की शैली अलग है और वह अपने वादों को लेकर संजीदा है। मगर कुछ समय बाद देखा गया कि पार्टी उन्हीं अंतर्विरोधों से घिर गई है, जिनके खिलाफ उसने नई राजनीति शुरू करने का भरोसा दिया था।

इसी के कारण पिछले विधानसभा चुनाव में उसे हार मिली। हालांकि इससे पहले पार्टी ने दिल्ली नगर निगम में अच्छी जीत हासिल की थी। मगर उसके कुछ प्रमुख नेता मुकदमों में फंसे दिख रहे हैं, उसका स्पष्ट असर चुनावी राजनीति में उसकी मौजूदगी पर पड़ा। जाहिर है, दिल्ली की राजनीति में फिलहाल उसके सितारे गर्दिश में दिख रहे हैं। ऐसे में अगर अब तक आम आदमी पार्टी की राजनीति में सक्रिय रहे और उसी के जरिए अपना एक कद बनाने वाले लोग साथ छोड़ रहे हैं, तो यह निश्चित रूप से पार्टी के लिए एक गंभीर चुनौती का वक्त है।

अब निजता और व्यक्तिगत आजादी को तरजीह...

डॉ. सुधीर कुमार

अगर पति-पत्नी अलग हो जाते हैं, तो कानून एक को मजबूर कर सकता है कि वह वापस दूसरे के साथ जाकर रहे। इसे वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना कहते हैं। भारतीय कानून में, यह प्रावधान प्रमुखत: हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9 के तहत आता है। यानी अगर किसी पति या पत्नी को बिना किसी वजह छोड़ दिया है, तो यह कानून उन्हें अदालत में जाकर कहने का अधिकार देता है कि वे अपना वैवाहिक जीवन फिर शुरू करना चाहते हैं। इसे कहते हैं, 'चलो फिर से साथ रहो' का कानूनी तरीका।

लेकिन आजकल लोग अपनी आजादी और मर्जी को ज़्यादा मानने लगे हैं। अदालतें भी सोचने लगी हैं कि किसी को जबरदस्ती साथ रहने के लिए कहना ठीक नहीं। इसलिए, अब वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना पहले जितना आसान नहीं रहा। अदालतें अब यह देखती हैं कि क्या वाकई दोनों साथ रह सकते हैं या फिर उन्हें अपनी ज़िंदगी अपनी मर्जी से जीने का हक है। अब यह ज़्यादा 'पसंद' की बात हो गई है, न कि सिर्फ कर्तव्य की। अब कानून नहीं कहता कि हर हाल में साथ रहो। देखता है कि क्या दोनों अपनी इच्छा से साथ रहना चाहते हैं।

पहले माना जाता था कि विवाह में पति-पत्नी का एक साथ रहना उनका कर्तव्य है, और यदि कोई एक साथी अलग रहना चाहता था, तो अदालत उसे वापस आने के लिए मजबूर कर सकती थी। लेकिन, अब अदालतें भी समझने लगी हैं कि किसी को उसकी इच्छा के विरुद्ध रिश्ते में रहने को मजबूर करना सही नहीं। कानून 'कर्तव्य' से 'पसंद' की ओर बढ़ रहा है।

कई अन्य देशों में, वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना का कानून या तो पूरी तरह समाप्त कर दिया गया है, या इसे बहुत ही कम और विशिष्ट हालात में इस्तेमाल किया जाता है। इन देशों में कानूनी दृष्टिकोण इस मान्यता पर आधारित है कि व्यक्ति को इस मामले में अधिकार होना चाहिए कि वह किसके साथ अपना जीवन बिताना चाहते हैं। यानी राज्य को इस व्यक्तिगत और अंतरंग मामले में हस्तक्षेप का हक नहीं। इस सोच के पीछे अहम कारण निजी स्वतंत्रता और स्वायत्तता को सर्वोपरि माना जाना है। पति हो या पत्नी, दूसरे के साथ रहने के लिए मजबूर करना मानवाधिकार उल्लंघन माना जाता है। यह निजता के अधिकार और यह तय करने की स्वतंत्रता का हनन है कि वे निजी जीवन में कैसे संबंध रखना चाहते हैं। इसके अतिरिक्त, कई देश तर्क देते हैं कि जबरदस्ती से बनाए गए रिश्ते अक्सर अस्वस्थ और दुखद होते हैं। यदि एक साथी संबंध से बाहर निकलना चाहता है, तो उसे वापस रहने के लिए मजबूर करने से केवल तनाव, मनमुटाव और संभावित दुर्व्यवहार ही बढ़ सकता है। कानून का उद्देश्य रिश्तों को बनाए रखना होना चाहिए, लेकिन ऐसे रिश्तों को नहीं जो आपसी सहमति और सम्मान पर आधारित न हों। कुछ देशों ने इस कानून को इसलिए समाप्त कर दिया कि यह लैंगिक रूप से पक्षपातपूर्ण है। इस का इस्तेमाल अक्सर महिलाओं को उनके अनिच्छुक पतियों के साथ वापस रहने के लिए मजबूर करने को किया जाता था, जबकि पुरुषों को ऐसी बाध्यता का सामना शायद ही कभी करना पड़ा।

भारत में भी अदालतें वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना कानून के बारे में चिंताएं व्यक्त कर रही हैं। उनका मानना है कि इस कानून का इस्तेमाल किसी व्यक्ति को उसकी इच्छा के विरुद्ध विवाह में बने रहने के लिए मजबूर करने के लिए किया जा सकता है। यह चिंता महिलाओं के लिए अधिक है, जिन्हें अक्सर अपने पति के साथ रहने के लिए बाध्य किया जाता है, भले ही वे दुर्व्यवहार, क्रूरता झेल रही हों। अदालतों की चिंता यह भी कि क्या यह कानून नागरिकों के मौलिक अधिकारों का उल्लंघन करता है। मुख्य रूप से, अदालतें निजता और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकारों के संभावित उल्लंघन पर फोकस कर रही हैं, जिसकी अनुच्छेद 21 के तहत गारंटी है। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय ने टी. सरिता बनाम टी. वेंकट सुब्बैया (1983) के अहम मामले में हिंदू विवाह अधिनियम की धारा 9, जो वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना से संबंधित है, को असंवैधानिक घोषित किया था। तर्क दिया था कि यह कानूनी प्रावधान व्यक्तिगत स्वतंत्रता और निजता के अधिकार का उल्लंघन करता है। इस मामले में न्यायमूर्ति पी.ए. चौधरी ने टिप्पणी करते हुए कहा था कि यह धारा एक व्यक्ति को उसकी शारीरिक स्वायत्तता से वंचित करती है, जिससे राज्य को निजी संबंधों के क्षेत्र में हस्तक्षेप की अनुमति मिल जाती है, जो अस्वीकार्य है। हालांकि, इस निर्णय को अगले ही वर्ष, सरोज रानी बनाम सुदर्शन कुमार चोपड़ा (1984) के मामले में सर्वोच्च न्यायालय ने पलट दिया। सर्वोच्च न्यायालय ने धारा 9 की संवैधानिक वैधता को बरकरार रखते हुए तर्क दिया कि इस प्रावधान का मुख्य उद्देश्य वैवाहिक कलह रोकना और विवाह संस्था को संरक्षित करना है। हालांकि इस फैसले में भी व्यक्तिगत स्वतंत्रता और पसंद के अधिकारों पर चिंताएं व्यक्त की गईं। इसके बाद, के.एस. पुट्टस्वामी (सेवानिवृत्त) बनाम भारत संघ (2017) का ऐतिहासिक फैसला आया, जिसने निजता के हक को संविधान के तहत मौलिक अधिकार के रूप में स्थापित किया। इस न्यायिक घोषणा के बाद, वैवाहिक अधिकारों की पुनर्स्थापना के प्रावधान की संवैधानिकता पर फिर से गंभीर सवाल उठने लगे हैं।